दक्षिण भारत के लोकगीतों में समाज

डॉ॰ अनुपमा तिवारी
असिस्टेंट प्रोफेसर,हिन्दी
अलायंस विश्वविद्यालय, बंगलोर
फोन – 8886995593/8142623426
ईमेल – anupama.tiwari@alliance.edu.in

भारतीय संस्कृति व सभ्यता में लोक साहित्य का प्रचलन प्राचीन काल से है। जब से मनुष्य ने इस धरती पर जन्म लिया है, तब से अपने विचारों के आदान – प्रदान के लिए गीत – संगीत, नृत्य – नाटक तथा अन्य कलाओं का सहारा लिया। इन्हीं के माध्यम से अपने हर्ष – उत्साह को दर्शाया। लोकगीतों का प्रारम्भ तभी से आरंभ हुआ, जब मानव के पास कोई लिपि नहीं थी। इससे पूर्व आदिमानव अपने भावों को व्यक्त करने के लिए सांकेतिक भाषा का प्रयोग करते थे। धीरे – धीरे भावों की अभिव्यक्ति के लिए भाषा के साथ लोकगीतों का जन्म हुआ। लोकगीतों के माध्यम से अंचल विशेष की संस्कृति, रहन – सहन, आचार-व्यवहार, जीवनयापन की शैली सब प्रतिबिम्बित हुआ है। जन्म से लेकर मृत्यु तक कोई भी ऐसा संस्कार नहीं जिससे संबन्धित गीत न मिलते हों। वार – त्योहार, ऋतु परिवर्तन, घर – गृहस्थी, सामाजिक लोकाचार, खेत – खलिहान तक हर जगह पर लोकगीतों की गूंज है। इन गीतों में भावों की गहराई भी होती है और संगीत का माधुर्य भी। साहित्य में प्रयुक्त लोकतत्वों में 'लोक साहित्य' और 'लोक भाषा' के सृजनात्मक उपयोग का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। साहित्य को निखारने में लोकगीत, लोक भाषा, लोक उक्ति, लोक कथा तथा लोक शब्दावली का विशेष योगदान रहता है। इनके अभाव में लोकतत्व की प्रस्तुति नीरस व अर्थहीन हो सकती है। विश्वभर में जब लिखित व प्रामाणिक लिपि उपलब्ध नहीं थी तब लोकगीत व लोकाचार ही अभिव्यक्ति के सशक्त माध्यम थे। भारत देश में भी प्रत्येक राज्य में लोक की धारा नैरंतर्य अपने भाव व प्रेरक संगीत से समाज का दिशा अवलोकित करती। इस लेख में दक्षिण भारत के राज्यों के लोकगीत और समाज से उनके संबंध पर चर्चा की जा रही है इस क्रम में सबसे पहले आंध्र प्रदेश के लोकगीत की बात करते हैं। आंध्र प्रदेश की मातृभाषा तेलुगु है और तेलुगु में लोकगीतों को 'जानपद गेयमुलु' कहते हैं। लोकगीतों का यह वैशिष्ट्य ही होता है कि गीतों में समाज, परिवेश व स्थिति को प्रस्तुत करना। आंध्र प्रदेश की जनता के आचार – विचार, रहन – सहन, खान – पान, रीति – नीति, उनकी सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक एवं आर्थिक स्थिति और उनका वेश – भूषा, अलंकरण, युद्ध संबंधी रीतियाँ, संगीत, विनोद के साधनों आदि का परिचय व्यापक रूप से यहाँ के लोकगीतों में रहता है। इस प्रदेश में मुर्गों का भिड़ंत कराना अर्थात मुर्गे लड़ाना विनोद का बहुत चर्चित माध्यम है। यद्यपि सरकार की ओर से इस कार्य के लिए मनाही भी है परंतु देसी मन कभी परंपरा से च्युत होना नहीं चाहता। विशेषकर यहाँ का प्रमुख त्यौहार संक्रांति के अवसर पर यह खूब मनाया जाता है। भले ही खुद के पास भोजन व खाद्य सामाग्री पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध न हो परंतु मुर्गे को लड़ाने व विजय दिलाने हेतु ये उसे खूब दूध, सूखे फल, बेसन, ज्वार आदि खिलाते हैं। "पर्व के समय बहुधा किसी न किसी गाँव में मुर्गों की लड़ाई होती रहती है। बहुत दूर दूर से लोग आकर इनमें भाग लेते हैं और प्रेक्षकों की संख्या अधिक हो जाती है। दो-तीन दिन की यात्रा करते हुए लोग अपने मुर्गों को लेकर आते हैं। लड़ाते समय इन मुर्गों के दाहिने पाँव में एक विशेष प्रकार की छूरी बांधकर छोड़ते हैं जिसे तेलुगु में 'कोडिक्कत्ति' कहते हैं।"1 (तेलुगु लोकगीतों में समाज, विजय राघव रेड्डी, पृ॰ – 23) यहाँ ऐसी भी लोकगाथाएं हैं जहां मुर्गे की इस लड़ाई में स्थानीय राजा - महाराजाओं में परस्पर युद्ध और उन राज्यों में मर मिट जाने का उल्लेख भी प्राप्त होता है। इनमें 'पल्नाटि वीर चरित्रमु', 'बोब्बिलि कथलु' आदि प्रमुख हैं। 'बोब्बिलि' कथा में बोब्बिलि के लोग अपने पक्ष के मुर्गे को जोश दिलाते हुए कहते हैं –

'चावण्टेनु मीरु भयपड़वददु बारा कोडी दा

येन्नाल्लु बतिकिना चावु सिद्धमु बारा कोडी दा

बोब्बिलि यंदुन पुट्टीनाबुरा बारा कोडी दा'

अर्थात – हे राज मुर्गे तुम मृत्यु से कदापि मत भयभीत होना। एक दिन सबको मरना ही है। हे राज मुर्गे जब दुखी हो जाना तब अपनी बोब्बिलि को याद करना। विजयनगरम जिले में स्थित बोब्बिलि शहर कृषि, पशु-पालन और खेती बाड़ी के लिए विख्यात है। राजा अपने मुर्गे को जीत दिलाने के लिए उसे बोब्बिलि के आन मान व शान की याद दिलाते हैं।

स्त्री के संघर्ष पूर्ण जीवन की कथा हर देश के लोकगीतों में उपलब्ध होती है। आंध्र प्रदेश इससे विलग नहीं है। अपने ही घर परिवार में जब स्त्री को अपनी बात या राय रखने का अधिकार नहीं होता और कोई उसकी भावना का सम्मान नहीं करता तब दुखी व उदासीन होकर अपने जन्म को ही कोसने लगती है –

'आदान्नि नेननु आईपुडिति गानि

गंड गोदद्लिक्रंव कोम्म नैननु जालु।

गोड्रालि वडालि ब्रतुकेला कोटीधन मेला,

स्वराज्य मिच्चीनां सवति पोरेला।

चुड़का आडेरू चूसी आडेरू

कनका आडेरू कलिकाल प्रजलु

पाड कुंटे जनेलु मूग दँटारु।'

अपने आपको स्त्री होने का दोष देते हुए कहती है कि संसार में स्त्री रूप में जन्म लेना अपराध है। औरत के पास धन हो लेकिन बंध्या हो तो क्या फायदा। समाज का क्या वह तो वेश्या कहकर निंदा करता है चुप रहो तो गूंगी कहकर मज़ाक लेते हैं और तिरस्कृत करते हैं। सारे धर्म और नियम स्त्रियॉं को जकड़े रहते हैं। यह स्पष्ट है कि सर्वत्र स्त्री का दुख एक ही है। जैसी व्यथा उपर्युक्त लोकगीतों में मिली है यह दर्द उत्तर भारत, पूर्वी भारत और पश्चिमी भारत के स्त्रियों की भी है। अपने अस्तित्व के तलाश में स्त्री कल भी थी आज भी है और भविष्य के बारे में कुछ कह नहीं सकते। स्त्री व्यथा के संदर्भ में ऐसे लोकगीत हर भाषा औए हर प्रांत में मिल जाते हैं।

आंध्र देश में दो प्रकार के लोकगीत दृष्टिगत होते हैं। प्रथम वर्ग में अशिक्षित जनता द्वारा गाये जाने वाले गीत हैं, जो साधारणत: श्रमिक, मजदूर कठोर श्रम के उपरांत अपनी थकावट भुलाने के लिए गाते हैं यथा – 'सुव्वी – सुव्वी व हैलस्सा' आदि। इस प्रदेश में ऐसी भी मान्यता है की लोकगीतों की प्रणेता हमारी पूज्य औरते ही हैं। उन्होने ने ही गीत को समाज से जोड़ा है। स्त्रियों के द्वारा प्रति कार्य में हास – परिहास, दुख – दर्द बांटने, व समृद्धि को दृष्टि में रखकर गया जाता है। "लोकगीत के दूसरा प्रकार है – विद्वानों से रचित लोकगीत। नंडूरि सुब्बाराव कृत ' एंकि – नायुडू बावा' गीत, कोनकल्ला वेंकट रत्नम कृत – 'मोक्क जोन्न तोटलो' आदि गाने इसी प्रकार के हैं। जाति के नाम पर लोकगीत प्रचलित हैं – गोल्लसुद्दुलू, एरुकुला कुरवजि, जंगम – कथा, विप्र विनोद, दासर-चिंडलु, जालरी – भागवत आदि। इनके अलावा कठपुतली के खेल, बुर्रकथा, ओग्गुकथा, बीथिनाटक, पगतिवेशालु, चीरूति रामायण आदि भी लोकगीत हैं जिन्हें आज भी आंध्र के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रदर्शित पाया जाता है। ये गीत जनता को उनकी पारंपरिकता का बोध कराता है।"2

आंध्र प्रदेश के लोकगीतों में बालगीत भी बहुत प्रचलित हैं। यद्यपि इनमें कुछ विशेष अर्थ निहित नहीं रहता परंतु भाव प्रधान न होते हुये भी ये लय प्रधान होते हैं। भाभी व जीजा जी का संबंध भारत में बड़ा ही महत्वपूर्ण एवं हास – परिहास वाला होता है। इसी के संदर्भ में यह गीत है –

'बावा बावा पन्नीरू / बावनु पटुकू तन्नेरू

विधि विधि तिप्पेरू / वीसेडु गंधन पुसेरू

चाविडि गुंजकु कट्टेरु / चप्पड़ि गुदूलु गुदेरू।'

आंध्र प्रदेश के लोकगीतों में लोकजीवन का विविध रूप परिलक्षित है जो यथार्थ को स्पष्ट करने वाला है । अस्मिता, पुरानी परंपरा,सामाजिक यथार्थ का सजीव चित्रण, स्त्री के मन की मार्मिक पीड़ा, बालगीत , कृषि व पशु पालन संबंधी गीत आंध्र प्रदेश के लोकगीतों में सन्निहित हैं जो उस परिवेश का परिचय कराती है और संस्कृति से जोड़कर रखती है ।

कर्नाटक के लोकगीत

कर्नाटक में लोकगीत के कई प्रकार मिलते हैं । यथा – कथा काव्य, तत्व पद, डोल्लिन पद, रिवायत पदगलु, गीगी पद, डप्पिन पद, मोहरं हाडुगलु, सोबानेपद, चौडिके पद, कोलाटद पद, हंतिय हाडु आदि । इसके अतिरिक्त भी बहुत सारे लोकगीत विभिन्न संदर्भ में हैं । यथा – ललिहाडु, मंगलारति, हसेंगे करेद हाडु, देवि स्तुति, मदुवेय हाडु, कुबुसद हाडु आदि । लावणी लोकगीतों में सर्वाधिक प्रसिद्ध लोकगीत इस प्रकार हैं – कलकी तुराई लावणी, कथासार लावणी, नीति सार लावणी, देश भक्ति लावणी आदि । लावणी गीत अशिक्षित पीढ़ी के द्वारा मौखिकी रूप से एक पीढ़ी से दूसरे पीढ़ी तक पहुंचाया गया । एक ओर जहां इस लोकगीत का विस्तार हुआ वहीं दूसरी ओर इसके मूल रूप में भी परिवर्तन होता रहा । इसका मुख्य कारण यह रहा कि जो मूल लावणी थी वह आम जनमानस के मध्य मुहजुबानी पहुँचते – पहुँचते अपने मूल रूप से परिवर्तित होती चली गई और उसका शाब्दिक और उच्चारण का प्रारूप बदलता गया । यही कारण है कि कभी – कभी मूल रूप को पहचानना मुश्किल हो जाता है ।

प्रश्नोत्तर शैली में स्त्री – पुरुष का संवाद होता है । पुरुष की पारंपरिक प्रवृत्ति स्वयं को श्रेष्ठ बताने व स्त्री को दोयम दर्जे का बताना है । संवाद में पुरुष स्त्री से कहता है उसकी शक्ति और पौरुष से विश्व परिचालित है । स्त्री उसके बात का खंडन करते हुये स्त्री व प्रकृति को सर्वोपरि मानती है । एक सुंदर प्रसिद्ध लावणी इस प्रकार है –

‘सारा सार विचार माडिदर हेण्णु आलतद संसारा

सावि‍र कुदुरेय सरदार नादरू मनिय हेंडतिगेतीजाराट

साकड इरबेकड

इतवान फूड ओंदरगटिग्यादरु

सेज्जेकिचडी ना अहिर बेकु

मज्जिगी पलदे कासिर बेकु

तुत्त माडि ना उणतिर बेकु

बेल्कितांग कण बिडतिर बेकु’

इसी प्रकार उत्तर कर्नाटक के लोकगीतों में ‘गी – गी समूह गीत’ अति लोकप्रिय है । गी - गी भी लावणी शैली का एक छोटा सा रूप है । इस लोकगीत की विशेषता यह है कि प्रत्येक गाने के अंत में इस शब्द का प्रयोग रहता है । “गी – गी गान के समय तीन कलाकार होते हैं । पुरुष और स्त्री दोनों साथ – साथ समूह में रहते हैं अथवा कभी – कभी केवल पुरुष ही होते हैं । पुरुष का पहनावा सफ़ेद धोती, सफ़ेद कमीज,उस पर बिना कॉलर का कोट कमर में कमरबंद होता है । ये सिर पर रुमाल या गांधी टोपी पहनते हैं तो औरतें साधारण सी साड़ी में होती हैं । यह गी – गी गीत गाने वालों का सामान्य पहनावा होता है । प्रमुख गायक के हाथ में छोटा सा वाद्य यंत्र होता है और वह उस वाद्य को बजाता हुआ गाता है तो उसके पीछे कोरस के रूप में एक तारा बजाते हुए हर पंक्ति क4ए अंत में ‘गीय – गीय गा – गा – गीय’ राग गाया जाता है । जो इन गीतों की विशेषता भी है और इस राग से गीत और ज़्यादा मधुर बन जाता है । इस गीत की एक विशेषता यह भी है कि प्रमुख गायक को प्रोत्साहित करने के लिए कुछ शब्द जैसे – हाँ कहिए, हाँ भाई, वाह – वाह, बहुत अच्छा आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता है ।” विशेष बात यह है कि भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में इस लोकगीत ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । उस दौरान कर्नाटक के आम जन तक महात्मा गांधी, सुभाषचंद्र बोस आदि के संदेश पहुंचाने का कार्य गी – गी गीतकार ही करते थे । साथ ही सामाजिक विसंगतियों और विद्रूपताओं, भ्रष्टाचार और कुरीतियों को दूर

करने का संदेश इन गीतों में रहता है। यदि यह कहा जाये कि गी – गी गीतों में समाज सुधार का अद्भुत सामर्थ्य है तो अत्योक्ति न होगी।

कर्नाटक का अति लोकप्रिय लोकगीत है 'गरतीयर हाडू'। इसका अर्थ है स्त्री संबंधी गीत। इन लोकगीतों में स्त्री के हर पक्ष यथा – त्याग, ममता, बलिदान, संकट आदि का उल्लेख मिल जाता है। परिवार का दायित्व निभाते, तिरस्कार सहते और अपनी भावनाओं को तिलांजलि देती स्त्री जब सुबह आँख खोलती है तो सर्व प्रथम भू माता को प्रणाम करती है –

'बेलगाग नानेद्दु यार्यार नेनेयले

एल्लु जीरिगे बेलेयोले भू तायि

एओंद गलिगे नेनेदेन'।

अर्थात हे धरती माँ आप विश्वभर के लोगों को शरण देती हैं, अन्न – फल, धातु और असंख्य चीजों से लोगों को समृद्ध करती हैं और सबसे ज्यादा दुख भी झेलती हैं। आप की ही तरह मेरा जीवन भी है अत: मैं सर्वप्रथम आपका वंदन करती हूँ। स्त्री पुरुष,परिवार, समाज के जटिल नियमों में इस प्रकार जकड़ी रहती है कि उसे ईश्वर के अतिरिक्त किसी अन्य पर विश्वास ही नहीं रहता। संघर्ष के क्षण में वह ईश से ही मदद की अपेक्षा रखती है –

'यारासे यनतगिल्ला भाग्याद बलवील्ल

करिलिंग है देवा निन्नासे ननगे अनुगाल'

इस गीत में स्त्री का दुख है कि - यद्यपि वह विपन्न है, हीन है, कमजोर है परंतु वह संसार के लोगों से कोई मदद नहीं लेगी। किसी से भी सहायता के लिए पूछेगी भी नहीं। उसे ईश्वर पर भरोसा है वह प्रभु के समक्ष ही अपना दुख रखेगी। इन गीतों के माध्यम से यह स्पष्ट है कि स्त्री भले ही कमजोर होती है परंतु उसका आत्मबल बहुत ही प्रबल होता है उसके आधार पर ही वह सभी बाधाओं को सहर्ष व दृढ़ता पूर्वक झेल लेती है। इस प्रकार कर्नाटक के लोकगीत वैविध्यपूर्ण हैं। इनमें संस्कार भी है, समाज सुधार भी है, आत्मीयता और परिवार भी है। स्त्री के गीत, समाज के गीत, वृद्धों के गीत, हाट – मेले के गीत, पर्व के गीत, आदिवासी समाज के गीत आदि अनेक संदर्भों में ये लोकगीत चर्चित हैं और ये आज भी उसी उत्साह से गाये जाते हैं जिन्हें सुनकर स्थानीय समाज का पूरा खाका हमारे समक्ष आ जाता है।

लोक कलाओं का क्षेत्र बड़ा व्यापक होता है। इनमें वे समस्त भाव सन्निहित होते हैं, जिनका संबंध लोक जीवन से होता है। भारत के दक्षिणी भाग में केरल राज्य की भूमि अपनी प्राकृतिक समृद्धता के कारण लोक कलाओं का विशिष्ट स्थान रही है। केरलीय लोकगीतों में प्रकृति में विश्वास और जनजातीय लोकगीत दिनचर्या का हिस्सा होते हैं। यहाँ की 'पनर' जनजाति समुदाय के लोग फसल काटने के उपरांत जागरण गीत गली मुहल्ले में गाते हैं और इन्ही की तरह 'पुल्लुवर' जाति के लोग सर्पपूजा के समय समूह में बंधु बांधवों के साथ गाते व खुशी मनाते हैं। यहाँ के कुछ प्रमुख लोकगीत हैं – 'तौट्टम गीत', 'वडक्कन पाट्टुक्कल', 'तैक्कन पाट्टुकल' 'माप्पिला पट्टु' आदि। "केरल एक ऐसा प्रांत है, जिसका एक भाग पूरी तरह समुद्र से जुड़ा है। उत्तरी छोर से दक्षिणी छोर तक केरलीय पश्चिम प्रांत सागर तट पर बसा है अत: केरलीय लोक को सागर से अलग कर देना संभव नहीं है। विशिष्ट बात यह है कि केरल प्राचीन काल से देश का महत्वपूर्ण बन्दरगाह बना रहा। मछली पालन एक वर्ग की जीविका रही। यही कारण है कि यहां सागर को 'माता' माना जाता है। मल्लाहे – मछुआरे भी अपने श्रम को गीत में प्रकट करते हैं। यद्यपि इनके गीतों के बोल महत्वपूर्ण नहीं होते, पर ताल व लय की कोई बराबरी नहीं कर सकता है। मछुआरे जब नाव पानी में उतारते हैं, तो उनके गीत के बोल इस तरह होते है –

'खींचों खीचों मिलकर खींचों रे साथियों,

जो भी खींचो तुरंत उठेगा,मिलकर जो खींचे तो,

पहाड़ भी उखड़ जाए.....।'

इस प्रकार केरल के लोकगीत भी आम जनमानस के हृदय के उद्गार हैं। दिनचर्या में शामिल होने वाले गीत हैं। केरल के लोकगीतों का वैशिष्ट्य यह है कि ये पौराणिक कथाओं पर आधारित हैं।

निष्कर्षत: यह कह सकते हैं कि लोकगीत चाहे दक्षिण भारत का हो, उत्तर या फिर पश्चिमी भारत का हो, लोक सबका एक ही है। भाषा अलग हैं परंतु भाव सबके एक ही हैं। दक्षिण भारत में जो लोकगीत समुद्र देव की अर्चना हेतु गाई जाती है, उत्तर भारत में ऐसा ही गीत गंगा मैया की पूजा के लिए गाया जाता है। खेती के समय – अनाज लगाने, अनाज की कटाई के पश्चात गीत गाना खुशी मनाना भारत के हर प्रांत के लोकगीतों में मिलता है। वर्षा के गीत, पर्व के गीत, विवाह के गीत हर राज्य के लोकगीतों का हिस्सा है। दक्षिण भारत के लोकगीतों में लोकजीवन का विविध पक्ष दर्शित है। इन गीतों में भाषा का सहज, सरल, सरस वर्णन उपलब्ध है। सम्पूर्ण लोक के सुख – दुख, संवेदनाओं, आस्थाओं, अंधविश्वासों, रीति – रिवाजों आदि की झलक लोकगीतों में मिलती है। अस्मिता, पुरानी परम्पराओं, सामाजिक यथार्थ का सजीव चित्रण, स्त्री के मन की मार्मिक पीड़ा, श्रमिकों के गीत, बालगीतों की सरसता आदि को लोकगीत सहज ही महसूस कराते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1- तेलुगु लोकगीतों में समाज, विजय राघव रेड्डी, पृ॰ – 23
2- आंध्र की सांस्कृतिक संरचना, एस पद्मावती, पृ॰- 155
3- कन्नड के लोकगीतों में सांस्कृतिक जीवन,सुमा टी॰ रोडनवर, पृ॰ – 132